

मुकदमों का विवरण

ए. श्रीनिवासा रेड्डी बनाम

राकेश शर्मा और एएनआर। (2023 की आपराधिक अपील संख्या 2339) अगस्त 08,2023

[बी. आर. गवई और जे. बी. पारदीवाला, जे. जे.] हेडनोट्स

विचार के लिए विषय:चाहे अपीलार्थी, राष्ट्रीयकृत बैंक का सहायक महाप्रबंधक, सरकार द्वारा या सरकार की मंजूरी के बिना अपने कार्यालय से हटाने योग्य हो ताकि ऐसा किया जा सके।197, सी. आर. पी. सी. लागू होता है; और यदि उसके खिलाफ आई. पी. सी. के तहत कार्रवाई की जा सकती है तो मंजूरी के बावजूद आई. पी. सी. के तहत दंडनीय है।19, पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत उन पर मुकदमा चलाने से इनकार कर दिया गया था।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 -s.197-जब आकर्षित नहीं होता है:

आयोजित किया गया:यद्यपि एक राष्ट्रीयकृत बैंक में काम करने वाला व्यक्ति एक लोक सेवक है, फिर भी एस के प्रावधान।197 एस के रूप में बिल्कुल भी आकर्षित नहीं होगा।197 केवल उन मामलों में आकर्षित किया जाता है जहां लोक सेवक ऐसा है जो सरकार द्वारा या सरकार की मंजूरी के अलावा अपनी सेवा से हटाने योग्य नहीं है-अपीलार्थी, एक सहायक महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, ओवरसीज बैंक ऐसा पद धारण नहीं कर रहा है जहां उसे सरकार की मंजूरी के अलावा सेवा से हटाया नहीं जा सकता है-इस प्रकार, भले ही यह आरोप लगाया जाता है कि वह एक लोक सेवक है, फिर भी एस के प्रावधान।197 आकर्षित नहीं होते हैं-एस का संरक्षण।197(1) केवल ऐसे लोक सेवकों के लिए उपलब्ध है जिनकी नियुक्ति का अधिकार केंद्र सरकार या राज्य सरकार है और प्रत्येक लोक सेवक के लिए नहीं-बैंकिंग क्षेत्र जो भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा शासित है और जिसे अनुच्छेद 12 के तहत राज्य का एक अंग माना जाता है।46 ए, बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949, अपीलार्थी को पी. सी. ए. अधिनियम, 1988 के तहत एक "लोक सेवक" माना जाता है, हालांकि, इसे आई. पी. सी. तक नहीं बढ़ाया जा सकता है-इसके अलावा, यू/एस.197, सी. आर. पी. सी. एक लोक सेवक से संबंधित है जिस पर "किसी भी अपराध का आरोप लगाया जाता है जो कथित तौर पर उसके द्वारा किया गया था, जबकि वह अपने आधिकारिक आदेश 933 के निर्वहन में कार्य कर रहा था या कार्य करने का इरादा रखता था।

932

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर.

कर्तव्य "जबकि, पी. सी. अधिनियम, 1988 में अनुध्यात अपराधों को अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में प्रत्यक्ष रूप से या यहां तक कि कथित रूप से किए गए कार्यों के रूप में नहीं माना जा सकता है-आई. पी. सी. और पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अपराध अलग-अलग और स्पष्ट हैं-आई. पी. सी. और पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अपराध करने के लिए किसी व्यक्ति पर मुकदमा चलाने के लिए आवश्यक मंजूरी के आदेश के बीच अंतर किया जाना है-इस प्रकार, हालांकि, अपीलकर्ता को पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत दंडनीय अपराधों से मुक्त कर दिया गया था, फिर भी आई. पी. सी. के अपराधों के लिए, उसे कानून के अनुसार आगे बढ़ाया जा सकता है।[पारस 41,45,49,53-55 और 58]

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 -धारा 19-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 -s.197-सांविधिक आवश्यकताएँ-इनके बीच अंतर:

आयोजित किया गया:विशेष रूप से पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अपराधों के लिए अभियोजन में, लोक सेवक के लिए मंजूरी अनिवार्य है-लोक सेवक के खिलाफ सामान्य दंडात्मक कानून के तहत मामलों में, यू/एस के तहत मंजूरी की आवश्यकता (या अन्यथा)।197, सी. आर. पी. सी. तथ्यात्मक पहलुओं पर निर्भर करता है-बाद के मामले में परीक्षण कमीशन या चूक के कार्य और लोक सेवक के आधिकारिक कर्तव्य के बीच "सांठगांठ" का है।[पैरा 59]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 -s.216-मंजूरी को दिया गया महत्व-चर्चा की गई।[पैरा 44]

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 -धारा 19 के तहत मंजूरी, यदि इस आधार पर अस्वीकार कर दी जाती है कि अभियुक्त के खिलाफ अभियोजन तुच्छ या परेशान करने वाला हो सकता है, तो आई. पी. सी. के मुकदमे पर इसका प्रभाव पड़ता है:

आयोजित किया गया: इस प्रश्न पर वर्तमान मामले में विचार नहीं किया जा रहा है क्योंकि शुरुआत में मंजूरी को इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया गया था कि अपीलार्थी के खिलाफ अभियोजन तुच्छ या परेशान करने वाला था, बल्कि इस आधार पर कि जो आरोप लगाया गया था वह केवल आवश्यक कर्तव्यों के निर्वहन में प्रक्रियात्मक अनियमितताएं थीं-क्या ऐसी प्रक्रियात्मक अनियमितताएं आई. पी. सी. के तहत कोई अपराध हैं या नहीं, इस पर निचली अदालत द्वारा गौर किया जाएगा-जिस मुद्दे पर प्रकाश डाला गया है, उसकी उच्चतम न्यायालय द्वारा उचित समय पर किसी अन्य मुकदमे में जांच की जा सकती है।[पैरा 60]

शब्द और वाक्यांश-एस में 'मंजूरी'।197, सीआरपीसी-अर्थ:

आयोजित किया गया: एस में।197, सी. आर. पी. सी., 'मंजूरी' शब्द का उपयोग एक क्रिया के रूप में किया गया है और इसलिए, इसका अर्थ सहमति देना, सहमति या अनुमोदन करना होगा।[पैरा 43]

934 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

शहरों और अन्य संदर्भों की सूची

के. च. प्रसाद बनाम श्रीमती। जे. वनलता देवी और अन्य (1987) 2 एससीसी 52:[1987] 2 एससीआर 216; एस. के. मिगलानी बनाम राज्य (दिल्ली का राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र) (2019) 6 एस. सी. सी. 111:[2019] 6 एससीआर 1158; कालीचरण महापात्रा बनाम उड़ीसा राज्य, (1998) 6 एससीसी 411:[1998] 3 एस. सी. आर. 961; लालू प्रसाद उर्फ लालू प्रसाद यादव बनाम.

बिहार राज्य (2007) 1 एस. सी. सी. 4-पर निर्भर था।

प्रकाश सिंह बादल एक और बनाम पंजाब राज्य और अन्य (2007)

1 एससीसी 1:[2006] 10 पूरक।एस. सी. आर. 197; ए. श्रीनिवासुलु बनाम राज्य प्रतिनिधि।पुलिस निरीक्षक द्वारा, 2010 की आपराधिक अपील संख्या 2417 पर निर्णय लिया गया

15.06.2023 स्टेशन हाउस ऑफिसर, सी. बी. आई./ए. सी. बी./बेंगलूर बनाम बी. ए. श्रीनिवासन

और एक और (2020) 2 एससीसी 153:[2019] 14 एस. सी. आर. 513-संदर्भित।

अमेरिका बनामटिलिंगहास्ट डी. जी., 55 एफ. 2 डी 279; गोकुलचंद द्वारका दास मोरारका बनाम राजा आकाशवाणी 1948 पी. सी. 82; गोकुलचंद द्वारका दास मोरारका बनाम।

राजा आकाशवाणी 1948 पी. सी. 82-संदर्भित।

अन्य मामलों के विवरणों में आयातित आदेश और आवेदन शामिल हैं

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार : 2023 की आपराधिक अपील संख्या 2339।

2019 के सी. आर. एल. पी. संख्या 6782 में हैदराबाद में तेलंगाना राज्य के लिए उच्च न्यायालय के दिनांक 20.06.2022 के निर्णय और आदेश से।

रूप:

डी. रामकृष्ण रेड्डी, सुश्री डी. तेजस्वी रेड्डी, ऋतिक मनचंदा, श्रीमती डी. भारती रेड्डी, अधिवक्ता।अपीलार्थी के लिए।

सुश्री ऐश्वर्या भाटी, ए. एस. जी., सुश्री चित्रांगदा राष्ट्रवारा, माधव सिंहल, सुश्री मेघा कर्णवाल, शबरीश सुब्रमण्यम, अनिल हुड्डा, अरविंद कुमार शर्मा, अजय शर्मा, शफी के अहमद, सुश्री अंजू, वरुण मिश्रा, सिद्धार्थ संगल, सुश्री नीलांजनी टंडन, पराग शर्मा, ललित अल्लावाधी, सुश्री ऋचा मिश्रा, अधिवक्ता।उत्तरदाताओं के लिए।

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर.

सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का निर्णय/आदेश

जे. बी. पारदीवाला, न्या

1 . अनुमति प्रदान की गई.

2. यह अपील तेलंगाना राज्य के लिए उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 2019 की आपराधिक याचिका संख्या 6782 में अपीलार्थी के नेतृत्व में पारित निर्णय और आदेश से उत्पन्न होती है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने याचिका को खारिज कर दिया और इस तरह भारतीय दंड संहिता, 1860 (संक्षेप में, आई. पी. सी.) की धारा 120-बी आर/डब्ल्यू 420,468 और 471 के तहत दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी के खिलाफ शुरू की गई आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने से इनकार कर दिया।

तथ्यात्मक मैट्रिक्स

3. अपीलार्थी (मूल अभियुक्त संख्या 2) प्रासंगिक समय पर भारतीय स्टेट बैंक, ओवरसीज बैंक (बैंक), हैदराबाद में सहायक महाप्रबंधक के रूप में कार्यरत था। उन पर आरोप है कि उन्होंने अन्य सह-अभियुक्तों के साथ मिलकर एक करोड़ रुपये के कॉर्पोरेट ऋण को मंजूरी देकर बैंक को धोखा देने की साजिश रची थी। मेसर्स स्वेन जेनेटेक लिमिटेड, सिकंदराबाद (मूल अभियुक्त संख्या 1) के पक्ष में 22.50 करोड़।

4. अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह प्रतीत होता है कि ऊपर उल्लिखित कंपनी ने नए उपकरणों की खरीद/विस्तार कार्यक्रम के कार्यान्वयन के उद्देश्य से ऋण के लिए आवेदन किया था। कंपनी ने रुपये की ऋण क्रेडिट सीमा के लिए बैंक के साथ भी आवेदन किया था। घरेलू बाजार से कच्चे माल की खरीद के उद्देश्य से 5 करोड़ रुपये और 5 करोड़ रुपये की नकद ऋण सीमा। कार्यशील पूंजी के रूप में उपयोग करने के लिए 20 करोड़ रुपये। अभियोजन पक्ष का मामला है कि बैंक द्वारा स्वीकृत सुविधाओं का उपयोग कंपनी द्वारा उन उद्देश्यों के लिए नहीं किया गया था जिनके लिए इसे मंजूरी दी गई थी और कंपनी ने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए और अपने पुराने ऋणों को चुकाने के लिए धन का उपयोग किया था।

5. इसमें अपीलार्थी के खिलाफ मामला यह है कि उसने सभी सिद्धांत/संवितरण शर्तों के अनुपालन के बिना निगमित ऋण जारी करने को मंजूरी देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। उन पर यह भी आरोप है कि उन्होंने रुपये की नकद क्रेडिट सीमा जारी करने की मंजूरी दी है। श्री कुप्पा श्रीनिवास (मूल अभियुक्त संख्या 3 क्षेत्रीय प्रबंधक) की सिफारिश पर 10 करोड़ रुपये, खरीदने के लिए प्रस्तावित मशीनरी की गैर-स्थापना की जानकारी होने के बावजूद

936

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 12 एस सी आर।

निगमित ऋण राशियों में से। यह भी आरोप लगाया गया है कि अपीलार्थी ने जल्दबाजी में एक करोड़ रुपये जारी करने की मंजूरी दी। स्वीकृत नकद ऋण सीमा में से 10 करोड़ रुपये। मूल अभियुक्त संख्या 1-4 और अन्य को गलत तरीके से लाभ पहुंचाने के धोखाधड़ी के इरादे से 20 करोड़ रुपये।

6. उपरोक्त संदर्भ में, केंद्रीय जांच ब्यूरो (सी. बी. आई.) ने अपराध सं. आर. सी. 6 (ई)/2013 अपीलार्थी और अन्य सह-अभियुक्तों के खिलाफ आई. पी. सी. की धारा 120-बी आर/डब्ल्यू 420,468 और 471 के तहत दंडनीय है और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2) आर/डब्ल्यू धारा 13 (1) (संक्षेप में, 'पी. सी. अधिनियम, 1988')।

7. सी. बी. आई. द्वारा जाँच के समापन पर, हैदराबाद में प्रधान विशेष न्यायाधीश (सी. बी. आई. मामले) की अदालत में अपीलार्थी सहित सभी छह व्यक्तियों के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया गया था। 8. ऐसा प्रतीत होता है कि दिनांक 1 के एक आदेश द्वारा, मुख्य महाप्रबंधक (एम. सी. जी.-I), एस. बी. आई. ने पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत अपीलार्थी पर पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए मुकदमा चलाने की मंजूरी देने से इनकार कर दिया।

9. ऊपर उल्लिखित वही प्राधिकारी, जिसने पहले मंजूरी देने से इनकार कर दिया था, ने बाद में ऊपर निर्दिष्ट अपने पहले के आदेश की समीक्षा की और पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने के

लिए मंजूरी देने वाले एक आदेश द्वारा। ऐसी मंजूरी पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के प्रावधानों के तहत दी गई थी। जैसे ही, ऊपर उल्लिखित मंजूरी के अनुसार आदेश रिकॉर्ड पर आया, हैदराबाद के विशेष न्यायालय ने अपीलार्थी और 13 अन्य सह-अभियुक्तों के खिलाफ ऊपर गिने गए अपराध का संज्ञान लिया। ऐसा प्रतीत होता है कि इसमें अपीलार्थी ने 2016 की रिट याचिका संख्या 33297 के आधार पर तेलंगाना उच्च न्यायालय के समक्ष मंजूरी देने के आदेश की वैधता और वैधता पर सवाल उठाया है।

10. उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी के नेतृत्व में दायर रिट याचिका को यह कहते हुए स्वीकार कर लिया कि मंजूरी देने वाला प्राधिकारी एक बार मंजूरी देने से इनकार करने के बाद अपने पहले के आदेश को समीक्षा में नहीं ले सकता था और अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने के लिए नई मंजूरी दे सकता था। उच्च न्यायालय ने अंततः दिनांक 1 के आदेश द्वारा रिट याचिका की अनुमति दी और मंजूरी देने के आदेश को रद्द कर दिया।

937

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 938 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

11. ऐसा प्रतीत होता है कि सी. बी. आई. ने उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित उपरोक्त निर्दिष्ट आदेश से व्यथित होकर 2019 की रिट अपील संख्या 119 को प्राथमिकता दी और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश की वैधता और वैधता पर सवाल उठाया।

12. सी. बी. आई. के नेतृत्व में अंतर-अदालत अपील दिनांक 1 के आदेश के माध्यम से विफल हो गई और इस तरह विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को लागू किया गया।

13. सी. बी. आई. ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को स्वीकार कर लिया और सोचा कि इसे आगे नहीं बढ़ाया जाएगा।

14. ऊपर निर्दिष्ट क्रमशः 30.10.2018 और 15.07.2019 दिनांकित आदेशों के अनुसार, अपीलार्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में, 'दंड प्रक्रिया संहिता') की धारा 239 के तहत विशेष न्यायालय के समक्ष आरोपमुक्त करने के आवेदन को प्राथमिकता दी।

15. हैदराबाद की विशेष अदालत ने अपने दिनांक 1 के आदेश द्वारा अपीलार्थी को मंजूरी के अभाव में पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अभियोजन पक्ष से आरोपमुक्त कर दिया। हालाँकि, विशेष अदालत ने अपीलार्थी को आई. पी. सी. के तहत दोषमुक्त करने से इनकार कर दिया। विशेष न्यायालय ने भरोसा किया कि

प्रकाश सिंह बादल और एक अन्य बनाम के मामले में इस न्यायालय का निर्णय।

पंजाब राज्य और अन्य ने (2007) 1 एस. सी. सी. 1 में रिपोर्ट किया। 16. विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

“मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए और हैदराबाद में माननीय उच्च न्यायालय के आदेशों को ध्यान में रखते हुए डब्ल्यू. पी. सं. 33279/16 दिनांक: 30.10.2018, पी. सी. अधिनियम की धारा 13 (2) आर/डब्ल्यू 13 (1) (डी) के तहत ए 2 के खिलाफ जारी मंजूरी की कार्यवाही को दरकिनार कर दिया गया है और इस तरह ए 2 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2) आर/डब्ल्यू 13 (1) (डी) के तहत उक्त मंजूरी के लिए आरोपमुक्त होने के लिए उत्तरदायी है। जहां तक आई. पी. सी. के प्रावधानों के तहत ए 2 के खिलाफ कथित अपराधों की बात है, उन्हें जारी रखा जाना चाहिए और आरोपी नंबर 2 पर अन्य अभियुक्तों के साथ कथित अपराध के लिए मुकदमा चलाया जाना चाहिए क्योंकि प्रकाश सिंह बादल के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्दिष्ट फैसले को देखते हुए आरोपी नंबर 2 पर कथित अपराधों के लिए मुकदमा चलाने के लिए धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता नहीं है।

इसलिए, हैदराबाद में माननीय उच्च न्यायालय के आदेशों को ध्यान में रखते हुए, पी. सी. अधिनियम की धारा 13 (2) आर/डब्ल्यू 13 (1) (डी) के तहत अभियुक्त नंबर 2 को आरोपमुक्त कर दिया जाता है। 2018 और जहाँ तक आई. पी. सी. की धारा 120-बी, 420, 468 और 471 के तहत अपराधों का संबंध है, आरोपी संख्या 2 पर अन्य अभियुक्तों के साथ मुकदमा चलाया जा सकता है।”

17. उपरोक्त से व्यथित महसूस करते हुए, अपीलार्थी ने 2019 की आपराधिक याचिका संख्या 6782 के माध्यम से उच्च न्यायालय के समक्ष यह प्रार्थना की कि उसे पूरे अभियोजन से मुक्त कर दिया जाए या दूसरे शब्दों में कहें तो उसे आई. पी. सी. के तहत अपराधों के लिए भी मुक्त कर दिया जाना चाहिए क्योंकि सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत मंजूरी देने वाले प्राधिकारी द्वारा कोई मंजूरी नहीं दी गई है।

18. उच्च न्यायालय ने 2019 की आपराधिक याचिका संख्या 6782 पर निर्णय दिया, जिसमें अपीलार्थी के नेतृत्व में और अपने विवादित आदेश दिनांक 20.06.2022 द्वारा इसे खारिज कर दिया गया।

19. अपीलार्थी के नेतृत्व में दायर याचिका को खारिज करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए प्रासंगिक निर्णय इस प्रकार हैं:

“23. यह ध्यान देने योग्य है कि 2015 के C.C.No.17 में दिनांकित 30.08.2019 आदेश में, निचली अदालत ने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि आई. पी. सी. के लिए याचिकाकर्ता के नेतृत्व में CrI.M.P.No.519/2015 एफ. आई. द्वारा आरोपमुक्त करने का आवेदन लंबित है। दलीलों के दौरान, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उक्त तथ्यों को स्वीकार किया गया था। इसलिए, याचिकाकर्ता यहां समानांतर उपायों का अनुसरण नहीं कर सकता है। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, जांच अधिकारी ने आई. डी. 1 की धारा 161 के तहत 65 गवाहों के बयान दर्ज किए हैं और 545 दस्तावेज एकत्र किए हैं। उसी पर विचार करने पर, उन्होंने याचिकाकर्ता और अन्य अभियुक्तों के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया है। आरोप-पत्र की विषय-वस्तु याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोप-पत्र का गठन करती है। याचिकाकर्ता द्वारा इसमें लिए गए बचाव पर Cr.P.C की धारा 482 के तहत दायर याचिका में विचार नहीं किया जा सकता है। याचिकाकर्ता को मुकदमे का सामना करना पड़ता है और अपनी बेगुनाही साबित करनी होती है।

24. इस संबंध में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कमल शिवाजी पोकर्णेकर बनाम महाराष्ट्र राज्य (ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 847) मामले में दिए गए निर्णय का उल्लेख करना उपयुक्त है, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के पास 939 मामले हैं।

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 940

स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया कि आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने की मांग केवल उस मामले में की जाती है जिसमें शिकायत में किसी भी अपराध का खुलासा नहीं होता है, या यह तुच्छ, परेशान करने वाला या दमनकारी होता है। यदि शिकायत में लगाए गए आरोपों का मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान नहीं लिया गया था, तो इसे रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय खुला था। यह आवश्यक नहीं था कि मुकदमे से पहले मामले का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाए ताकि यह पता लगाया जा सके कि मामला दोषसिद्धि में समाप्त होगा या बरी। यदि यह शिकायत पढ़ने और उसमें लगाए गए आरोपों पर विचार करने पर प्रकट होता है, तो शपथ पर दिए गए बयान के आलोक में कि अपराध की सामग्री का खुलासा किया गया है, तो उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप करने का कोई औचित्य नहीं होगा। वे बचाव जो उपलब्ध हो सकते हैं, या तथ्य/पहलू जो मुकदमे के दौरान स्थापित होने पर बरी हो सकते हैं, शिकायत को खारिज करने के लिए आधार नहीं थे। उस स्तर पर, केवल यह सवाल प्रासंगिक था कि क्या शिकायत में किए गए कथन आपराधिक अपराध के तत्वों को स्पष्ट करते हैं या नहीं। न्यायालय को इस बात पर विचार करना होगा कि क्या शिकायत प्रथम दृष्टया उन तथ्यों का खुलासा करती है जो प्रत्यर्थियों के खिलाफ आरोप लगाए गए थे। उक्त आरोपों की शुद्धता या अन्यथा का फैसला केवल मुकदमे में ही किया जाना था। प्रक्रिया जारी करने के प्रारंभिक चरण में, न्यायालयों के लिए अभियुक्त की ओर से की गई दलीलों के गुण-दोष में प्रवेश करके कार्यवाही को दबाने का अधिकार नहीं था। आपराधिक शिकायतों को केवल इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है कि उनमें लगाए गए आरोप नागरिक प्रकृति के प्रतीत होते हैं। यदि शिकायत में अभियुक्त के खिलाफ कथित अपराध के घटकों को प्रथम दृष्टया बनाया गया था, तो आपराधिक कार्यवाही को बाधित नहीं किया जाएगा।

× × ×

× × ×

× × ×

26. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए और उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपराध पर आते हुए क्योंकि गंभीर और विशिष्ट आरोप हैं, यह न्यायालय याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्यवाही को रद्द करने के लिए इच्छुक नहीं है। 27. नतीजतन, आपराधिक याचिका खारिज कर दी जाती है। हालाँकि, चूंकि विषय कैलेंडर मामला वर्ष

2015 का है, इसलिए हैदराबाद में सी. बी. आई. मामलों के विशेष न्यायाधीश को इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से तीन (3) महीने की अवधि के भीतर कानून के अनुसार उक्त मामले (2015 का आई. डी. 1) का निपटारा करने का निर्देश दिया जाता है।"

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 12 एस सी आर।

20. ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, अपीलार्थी वर्तमान अपील के साथ इस न्यायालय के समक्ष है।

एप्पेलेंट के स्वयं पर प्रस्तुतियाँ

21. अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वकील श्री डी. रामकृष्ण रेड्डी ने जोरदार ढंग से प्रस्तुत किया कि आईपीसी की धारा 120-बी, 420, 468 और 471 के तहत अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी अनिवार्य है। वह प्रस्तुत करेंगे कि पी. सी. अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने की मंजूरी को अस्वीकार कर दिया गया है, इसलिए अपीलार्थी पर अब आई. पी. सी. की धारा 197 के तहत वैध मंजूरी के बिना आई. पी. सी. के तहत मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है। 22. विद्वान वकील ने आगे कहा कि अपीलार्थी की विभागीय जांच भी की गई थी। विभागीय जाँच मोटे तौर पर उन्हीं आरोपों पर थी जिन पर अपीलार्थी पर अब हैदराबाद में विशेष न्यायाधीश के न्यायालय में मुकदमा चलाने की मांग की गई है। उन्होंने बताया कि अपीलार्थी को विभागीय जांच में सभी आरोपों से बरी कर दिया गया, जैसा कि जाँच अधिकारी की दिनांक 09.06.2014 की रिपोर्ट से स्पष्ट है। 23. श्री रेड्डी ने अपनी उपरोक्त दलीलों के समर्थन में इस न्यायालय के तीन फैसलों पर भरोसा किया है (i) प्रकाश सिंह बादल (ऊपर),

((ii) ए. श्रीनिवासुलु बनाम राज्य प्रतिनिधि। पुलिस निरीक्षक, आपराधिक द्वारा

2010 की अपील संख्या **2417** ने **15.06.2023** और (iii) स्टेशन हाउस पर निर्णय लिया

ऑफिसर, सी. बी. आई./ए. सी. बी./बेंगलूर बनाम बी. ए. श्रीनिवासन और एक अन्य, में रिपोर्ट किया गया

(2020) 2 एससीसी 153। 24. ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वकील ने प्रार्थना की कि आई. पी. सी. के तहत अपराधों के लिए आपराधिक अभियोजन जारी रखना कानून की प्रक्रिया का घोर दुरुपयोग होगा और इससे न्याय की गंभीर विफलता होगी। उन्होंने प्रार्थना की कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश को दरकिनार कर दिया जाए और अपीलार्थी को आपराधिक अभियोजन से मुक्त किया जाए।

सी. बी. आई. के बारे में प्रस्तुतियाँ (जवाब सं. 2)

25. सी. बी. आई. की ओर से पेश अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल (ए. एस. जी.) सुश्री ऐश्वर्या भाटी ने कहा कि हालांकि मंजूरी देने वाले प्राधिकरण ने 941 के प्रावधानों के तहत दंडनीय अपराधों के लिए अपीलकर्ता पर मुकदमा चलाने के लिए पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी देने से इनकार कर दिया।

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 942 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

पी. सी. अधिनियम, 1988 अभी तक, जो अपने आप में अपीलार्थी को आई. पी. सी. के तहत दंडनीय अपराधों से भी मुक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

26. विद्वान ए. एस. जी. ने आगे प्रस्तुत किया कि सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत आवश्यक मंजूरी और पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत आवश्यक मंजूरी अलग-अलग आधारों पर है, जबकि सी. आर. पी. सी. के संदर्भ में आई. पी. सी. के तहत मंजूरी राज्य या केंद्र सरकार द्वारा दी जानी आवश्यक है; पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत, इसे धारा 19 में निर्दिष्ट अधिकारियों द्वारा भी दी जा सकती है।

27. उन्होंने प्रस्तुत किया कि सी. बी. आई. ने किसी भी समय आई. पी. सी. के तहत अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने के लिए सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत मंजूरी के लिए अनुरोध नहीं किया था। केवल पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी के लिए अनुरोध किया गया था, जिसे एक बार अस्वीकार कर दिया गया था और उसके बाद मंजूरी दे दी गई थी, लेकिन अंततः पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी के संबंध में मुद्दा उच्च न्यायालय द्वारा रोक दिया गया। सुश्री भाटी के अनुसार, अपीलार्थी की ओर से यह दावा किया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी के लिए भी अनुरोध किया गया था और इसे अस्वीकार कर दिया गया था, एक गलत धारणा या आधार पर आगे बढ़ता है।

28. इस संबंध में, सुश्री भाटी ने पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी का अनुरोध करते हुए भारतीय स्टेट बैंक के मुख्य सतर्कता कार्यालय को सी. बी. आई. द्वारा संबोधित दिनांक 1 का पत्र रिकॉर्ड में रखा। ऊपर उल्लिखित पत्र इस प्रकार है:

“को।

मुख्य सतर्कता कार्यालय

भारतीय स्टेट बैंक

सतर्कता विभाग,

निगमित केंद्र,

P.B.No.12,

मुंबई-400 021।

उप:सी. बी. आई. की आर. सी. 6 (ई)/2013 में सी. बी. आई. रिपोर्ट, बी. एस. एंड एफ. सी., बेंगलूर सर,

में आर. सी. 6 (ई)/2013-बी. एल. आर. द्वारा दर्ज आपराधिक मामले में सी. बी. आई. की रिपोर्ट को अग्रेषित कर रहा हूँ जिसमें आरोपों, जांच के दौरान सामने आए तथ्यों और जांच के परिणाम को शामिल किया गया है।

2. जांच से पता चला है कि निम्नलिखित व्यक्तियों के खिलाफ कार्रवाई शुरू करने के लिए रिकॉर्ड पर पर्याप्त सामग्री साक्ष्य है: (i) श्री वेंकट रमण कलवकोलनू (ए-1), प्रबंध निदेशक, मैसर्स का अभियोजन। स्वेन जेनेटेक लिमिटेड, और मैसर्स जुपिटर बायोसाइंसेज लिमिटेड, सिकंदराबाद; श्री ए. श्रीनिवास रेड्डी (ए-2), सहायक महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, अनंतपुर क्षेत्रीय कार्यालय, अनंतपुर, आंध्र प्रदेश; श्री कुप्पा श्रीनिवास (ए-3), मुख्य प्रबंधक और संबंध प्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, आंध्र प्रदेश, मैसर्स स्वेन जेनेटेक लिमिटेड (ए-4), No.10-2-71 और 72/1, रोड नंबर 3, वेस्ट मारेडपल्ली, सिकंदराबाद, श्री एम. वी. रवि (ए-5), पूर्व सहायक। उपाध्यक्ष, विपणन, मैसर्स जुपिटर बायोसाइंसेज लिमिटेड, सिकंदराबाद, श्री ई. नरसिम्हा रेड्डी (ए-6), प्रबंध निदेशक, मैसर्स रूट्स मेडिकेयर प्राइवेट लिमिटेड, No.182, एम. आई. जी. एच., भारत नगर कॉलोनी, हैदराबाद, श्री पी. वी. रामा राव (ए-10), जो पहले वरिष्ठ कार्यकारी लेखा, मैसर्स जुपिटर बायोसाइंसेज लिमिटेड, सिकंदराबाद, श्री पी. गिरिधर गौड़ (ए-6) के रूप में काम कर चुके हैं। 11), श्री सुंदर हरि प्रसाद (ए-12), जो पहले कार्यकारी-खातों के रूप में काम करते थे, मैसर्स जुपिटर बायोसाइंसेज लिमिटेड, सिकंदराबाद, श्री एम. तुलसी राम (ए-13), जो पहले प्रबंधक के रूप में काम करते थे, मैसर्स जुपिटर बायोसाइंसेज लिमिटेड, सिकंदराबाद, श्री वी. ए. आर. चंद्र मूर्ति (ए-14), जो पहले लेखा पर्यवेक्षक, मैसर्स जुपिटर बायोसाइंसेज लिमिटेड के रूप में काम करते थे।, श्री श्याम सुंदर सूरी (ए-15), मालिक, मैसर्स वी. आर. एसोसिएट्स, No.10-3-315, स्ट्रीट नंबर 6, ईस्ट मारेडपल्ली, हैदराबाद, श्री डी. वी. एस. सूर्यनारायण (ए-16), पूर्व मालिक, मैसर्स थेमिस एंटरप्राइजेज, हैदराबाद, श्री राजेंद्र राजू (ए-17), पूर्व मालिक, मैसर्स सूरज इंडस्ट्रीज, हैदराबाद यू/एस। 120-बी. आर./डब्ल्यू. 420,468 और 471 आई. पी. सी. और पी. सी. अधिनियम, 1988 की यू/एस. 13 (2) आर/डब्ल्यू. 13 (1) (डी) और उसके मूल।

(ii) श्री जी. सुरेश, उप प्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, येरागुंटला (एम), कडप्पा जिला, आंध्र प्रदेश के खिलाफ बड़ा जुर्माना लगाने के लिए नियमित विभागीय कार्रवाई।

(iii) श्री यू. सुदेश कुमार (ए-7), मुख्य प्रबंधक, एस. बी. आई., वाणिज्यिक शाखा, कोटी, हैदराबाद और श्री के. डी. मेनन, डी. जी. एम., एस. बी. आई., एस. ए. एम., कॉर्पोरेट सेंटर, मुंबई के खिलाफ ऐसी कार्रवाई।

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 944 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

3. आपसे अनुरोध है कि श्री ए. श्रीनिवास रेड्डी (ए-2), सहायक महाप्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, अनंतपुर क्षेत्रीय कार्यालय, अनंतपुर, आंध्र प्रदेश और श्री कुप्पा श्रीनिवास (ए-3), मुख्य प्रबंधक और संबंध प्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, अनापर्थी पूर्व, गोदावरी जिला, आंध्र प्रदेश के खिलाफ अभियोजन के लिए मंजूरी भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 19 (1) (सी) के तहत सक्षम प्राधिकारी से प्राप्त करें।

4. पैरा 2 (ii) में उल्लिखित अभियुक्त व्यक्ति के खिलाफ बड़ा जुर्माना लगाने के लिए विभागीय कार्यवाही शुरू करने के लिए गवाहों की सूची, दस्तावेजों की सूची, गवाहों के बयानों की प्रतियां और दस्तावेजों की प्रतियों के साथ आरोप-पत्रों का मसौदा और आरोप-पत्रों का मसौदा विवरण इसके साथ संलग्न हैं। यह भी अनुरोध किया जाता है कि उपरोक्त अधिकारियों के खिलाफ स्थापित आरडीए के परिणाम को त्रैमासिक आधार पर और अनुशासनात्मक प्राधिकरण के आदेश की प्रति के साथ आरडीए की कार्यवाही के अंतिम निपटारे के तुरंत बाद सूचित किया जाए।

5. सी. बी. आई. रिपोर्ट को कृपया एक गोपनीय दस्तावेज के रूप में माना जा सकता है, और उपरोक्त अपराधी अधिकारियों पर आरोप, आरोप के बयान या विभागीय कार्यवाही शुरू करने के आदेश, यदि कोई हो, में इसका कोई संदर्भ नहीं दिया जा सकता है। चूंकि सी. बी. आई. को आर. टी. आई. अधिनियम, 2005 के तहत छूट दी गई है, इसलिए अधिसूचना सं. भारत सरकार का एफ. No.1/3/2011-IR दिनांक 09.06.11, यदि कोई आवेदक आर. टी. आई. अधिनियम, 2005 के तहत सी. बी. आई. रिपोर्ट या उसके हिस्से की प्रति मांगता है, तो उसे अस्वीकार किया जा सकता है।

6. सी. बी. आई. रिपोर्ट की एक प्रति इसके संलग्नकों के साथ संयुक्त सचिव, बैंकिंग प्रभाग, आर्थिक कार्य विभाग, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार, जीवनदीप भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली और निदेशक, केंद्रीय सतर्कता आयोग, सतारकता भवन, जी. पी. ओ. परिसर, ब्लॉक-ए, आई. एन. ए., नई दिल्ली को भी सूचना और आवश्यक कार्रवाई के लिए भेजी गई है। 7. मंजूरी देने वाला प्राधिकारी, यदि आवश्यक हो, तो साक्ष्य की व्याख्या करने के लिए जांच अधिकारी को बुला सकता है, क्योंकि इससे मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को साक्ष्य की उचित रूप से सराहना करने और बाद के चरण में मुकदमे के दौरान क्षेत्राधिकार अदालत के समक्ष साक्ष्य देने में भी मदद मिलेगी।

8. अभियोजन के लिए मंजूरी को साबित करने के लिए, यह अनुरोध किया जाता है कि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के तहत काम करने वाले अधिकारी का नाम जो मामले से परिचित है और मंजूरी देने वाले प्राधिकारी द्वारा हस्ताक्षर और मन के प्रयोग को साबित कर सकता है, उसे गवाह के रूप में उद्धृत करने के लिए इस अधिकारी को सूचित किया जा सकता है। आपसे अनुरोध है कि अभियोजन के लिए मंजूरी देने के लिए जारीकर्ता प्राधिकरण की क्षमता स्थापित करने के लिए शक्तियों के प्रत्यायोजन के प्रासंगिक उद्धरण की प्रमाणित प्रतियां प्रदान करें।

9. सी. बी. आई. रिपोर्ट की प्राप्ति को स्वीकार किया जा सकता है। आपकी वफादारी से,

(डॉ. सूर्या थंकप्पन

शाखा प्रमुख

सी. बी. आई., बी. एस. एंड एफ. सी.,

बैंगलोर) "

29. उपरोक्त पत्र को हमारे निर्णय में केवल यह इंगित करने के लिए शामिल किया गया है कि इसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 का कोई संदर्भ नहीं है। 30.....ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, विद्वान ए. एस. जी. ने प्रार्थना की कि इस अपील में कोई योग्यता नहीं होने के कारण इसे खारिज किया जा सकता है।

बैंक के स्वयं के बारे में प्रस्तुतियाँ (जवाब सं. 1)

31. बैंक की ओर से पेश विद्वान वकील श्री सिद्धार्थ संगल ने जोरदार ढंग से कहा कि पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अभियुक्तों से आरोपमुक्त करने की मांग करने वाले अपीलार्थी के आवेदन को पहले ही अनुमति दी जा चुकी है, हालांकि, आई.

पी. सी. के तहत अभियुक्तों से आरोपमुक्त करने की मांग करने वाले उनके आवेदन को एल. डी. के दिनांक 1 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है। सी. बी. आई. अदालत और उक्त आदेश को इस अदालत में चुनौती नहीं दी गई है।

32. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 1 के विवादित आदेश में स्पष्ट रूप से दर्ज किया है कि 2 की कार्यवाही द्वारा, पी. सी. अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत मुकदमा चलाने की मंजूरी से इनकार कर दिया गया था और 3 की कार्यवाही के माध्यम से पी. सी. अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत मुकदमा चलाने की मंजूरी दी गई थी, इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि आई. पी. सी. के तहत दंडनीय अपराधों के संबंध में सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत कोई मंजूरी नहीं मांगी गई थी या दी गई थी या अस्वीकार कर दिया गया था।

945

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 946

33. विद्वान वकील ने आगे प्रस्तुत किया कि सी. बी. आई. अदालत और उच्च न्यायालय के समक्ष सी. बी. आई. का सुसंगत रुख यह रहा है कि आई. पी. सी. के तहत दंडनीय अपराधों के लिए अपीलार्थी पर मुकदमा चलाने के लिए सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत किसी पूर्व मंजूरी की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इस तरह की मंजूरी लेने के लिए कोई कानूनी दायित्व नहीं है।

34. यह प्रस्तुत किया गया था कि अपीलार्थी की ओर से यह कहना गलत है कि उसे विभागीय कार्यवाही में दोषमुक्त कर दिया गया है। अपीलार्थी को अंततः उनके खिलाफ लगाए गए आरोपों के संबंध में 'प्रशासनिक चेतावनी' दी गई, जो अपीलार्थी द्वारा अपने कर्तव्यों का निर्वहन पूरी निष्ठा और परिश्रम के साथ करने में विफलता और बैंक कार्यालय के लिए अनुपयुक्त और बैंक के हित के लिए अत्यधिक प्रतिकूल तरीके से कार्य करने के लिए लगाए गए थे-उक्त आरोप आई. पी. सी. की धारा 420, 468, 471 या 120-बी में से कोई भी नहीं थे।

35. यह भी तर्क दिया गया कि किसी भी मामले में, आरोप समान नहीं होने के कारण, विभागीय कार्यवाही का भाग्य मुकदमे के आधार पर आपराधिक कार्यवाही के संबंध में बिल्कुल भी भारी नहीं हो सकता है। इस प्रकार, अपीलार्थी अपने खिलाफ आपराधिक मामले को रद्द करने की मांग करने के लिए विभागीय कार्यवाही के परिणाम पर भरोसा नहीं कर सकता है।

36. अंत में, विद्वान वकील ने कुछ बहुत महत्वपूर्ण तर्क दिया। यह प्रस्तुत किया गया था कि सी. आर. पी. सी. की धारा 197 को नंगे पढ़ने से स्पष्ट रूप से संकेत मिलता है कि सी. आर. पी. सी. की धारा 197 केवल उन लोगों पर लागू होती है जो सार्वजनिक हैं।

ऐसे कर्मचारी जिन्हें सरकार की मंजूरी से हटाया जा सकता है और

कोई अन्य 'लोक सेवक' नहीं। मामले में इस अदालत के फैसले पर निर्भर

एस. के. मिगलानी बनाम राज्य (एन. सी. टी. दिल्ली), (2019) 6 एस. सी. सी. 111 में रिपोर्ट किया गया

यह प्रस्तुत किया गया था कि राष्ट्रीयकृत बैंक का प्रबंधक हालांकि एक लोक सेवक है जिसे सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के बिना अपने पद से हटाया नहीं जा सकता है और इसलिए वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत संरक्षण का दावा नहीं कर सकता है।

ऊपर उल्लिखित ऐसी परिस्थितियों में, विद्वान वकील ने प्रार्थना की कि वर्तमान अपील में कोई योग्यता नहीं होने के कारण, उसे खारिज किया जा सकता है।

विश्लेषण

37. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुनने और अभिलेख पर रखी गई सामग्री को देखने के बाद कानून के निम्नलिखित प्रश्न हमारे विचार के लिए आते हैं:

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 12 एस सी आर।

(i) क्या अपीलार्थी, जो भारतीय स्टेट बैंक, विदेशी बैंक में सहायक महाप्रबंधक के रूप में अपनी क्षमता में कार्य कर रहा है, सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के साथ अपने कार्यालय से हटाने योग्य है ताकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 लागू हो सके? (ii) क्या विशेष न्यायालय (सी. बी. आई.) के लिए अपीलार्थी के खिलाफ आई. पी. सी. के तहत दंडनीय अपराधों के लिए कार्यवाही करने की अनुमति है, इस तथ्य के बावजूद कि पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत अपीलार्थी पर पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अपराधों के लिए मुकदमा चलाने की मंजूरी रिकॉर्ड में नहीं है क्योंकि उसे अस्वीकार कर दिया गया था?

सी. आर. पी. सी की धारा 197

38. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 इस प्रकार है:

“197. न्यायाधीशों और लोक सेवकों का अभियोजन।—

(1) जब कोई व्यक्ति जो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या लोक सेवक है या था जो सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के बिना अपने पद से हटाने योग्य नहीं है, उस पर अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का तात्पर्य रखते हुए कथित रूप से किए गए किसी अपराध का आरोप लगाया जाता है, तो कोई भी न्यायालय लोकपाल और लोकायुक्ता अधिनियम, 2013 (2014 का 1) में अन्यथा प्रदान की गई पूर्व मंजूरी के अलावा इस तरह के अपराध का संज्ञान नहीं लेगा।

(क) किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में, जो केंद्र सरकार के संघ के संबद्ध मामलों के संबंध में नियोजित है या, जैसा भी मामला हो, कथित रूप से नियुक्त होने के समय था;

(ख) किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में, जो राज्य सरकार के संबंध में नियोजित है या, जैसा भी मामला हो, कथित रूप से नियोजित होने के समय था: बशर्ते कि जहां खंड (बी) में निर्दिष्ट किसी व्यक्ति द्वारा उस अवधि के दौरान कथित अपराध किया गया था जब संविधान के अनुच्छेद 356 के खंड (1) के तहत जारी की गई उद्घोषणा किसी राज्य में लागू थी, खंड (बी) इस तरह लागू होगा जैसे कि उसमें होने वाली "राज्य सरकार" अभिव्यक्ति के लिए, "केंद्र सरकार" अभिव्यक्ति को प्रतिस्थापित किया गया था।

947

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 948 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

स्पष्टीकरण.--संदेहों को दूर करने के लिए एतद्वारा यह घोषित किया जाता है कि धारा 166 ए, धारा 166 बी, धारा 354, धारा 354 ए, धारा 354 बी, धारा 354 सी, धारा 354 डी, धारा 370, धारा 375, धारा 376 एबी, धारा 376 सी, धारा 376 डी, धारा 376 डीए, धारा 376 डीबी या भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) की धारा 509 के तहत कथित रूप से किए गए किसी अपराध के आरोपी लोक सेवक के मामले में किसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं होगी।

(2) कोई भी न्यायालय केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के अलावा, अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का तात्पर्य रखते हुए संघ के सशस्त्र बलों के किसी भी सदस्य द्वारा किए गए किसी भी अपराध का संज्ञान नहीं लेगा।

(3) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, निर्देश दे सकती है कि उप-धारा (2) के प्रावधान सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए प्रभारित बलों के सदस्यों के ऐसे वर्ग या श्रेणी पर लागू होंगे जो उसमें निर्दिष्ट किए जाएं, जहां भी वे सेवारत हों, और उसके बाद उस उप-धारा के प्रावधान ऐसे लागू होंगे जैसे कि उसमें आने वाली "केंद्र सरकार" अभिव्यक्ति के लिए, "राज्य सरकार" अभिव्यक्ति को प्रतिस्थापित किया गया था।

(3 क) उप-धारा (3) में किसी बात के होते हुए भी, कोई भी न्यायालय उस अवधि के दौरान अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का तात्पर्य रखते हुए किसी राज्य में सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने के लिए आरोपित बलों के किसी भी सदस्य द्वारा किए गए किसी भी अपराध का संज्ञान नहीं लेगा, जब संविधान के अनुच्छेद 356 के खंड (1) के तहत जारी एक उद्घोषणा उसमें लागू थी, सिवाय केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के।

(3 ख) इस संहिता या किसी अन्य कानून में इसके विपरीत कुछ भी होने के बावजूद, यह घोषित किया जाता है कि राज्य सरकार द्वारा दी गई कोई भी मंजूरी या ऐसी मंजूरी पर किसी अदालत द्वारा लिया गया कोई भी संज्ञान, 20 अगस्त, 1991 को शुरू होने वाली अवधि के दौरान और उस तारीख से तुरंत पहले समाप्त होने की तारीख के दौरान, जिस दिन दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1991 (1991 का 43), राष्ट्रपति की सहमति प्राप्त करता है, उस अवधि के दौरान कथित रूप से

किए गए अपराध के संबंध में, जब संविधान के अनुच्छेद 356 के खंड (1) के तहत जारी एक उद्घोषणा राज्य में लागू थी, अमान्य होगी और यह केंद्रीय सरकार के लिए सक्षम होगी।

सरकार ऐसे मामले में मंजूरी दे और न्यायालय उस पर संज्ञान ले।

(4) केंद्र सरकार या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो, उस व्यक्ति का निर्धारण कर सकती है जिसके द्वारा, किस तरीके से, और किस अपराध के लिए, ऐसे न्यायाधीश, मजिस्ट्रेट या लोक सेवक का अभियोजन किया जाना है, और उस न्यायालय को निर्दिष्ट कर सकती है जिसके समक्ष मुकदमा चलाया जाना है।"

39. विधि आयोग ने अपनी 41 वीं रिपोर्ट में कहा है:

" 15.123. धारा 197, जैसा कि अब है, विशिष्ट श्रेणी के लोक सेवक पर तभी लागू होती है जब वह ऐसे लोक सेवक के रूप में कार्य कर रहा हो। यह उनके सेवानिवृत्त होने, इस्तीफा देने या अन्यथा सेवा छोड़ने के बाद उन पर लागू नहीं होता है। हमें ऐसा लगता है कि इस धारा के तहत सुरक्षा की उतनी ही आवश्यकता है जितनी सेवानिवृत्ति से पहले लोक सेवक की सेवानिवृत्ति के बाद है। धारा द्वारा प्रदत्त संरक्षण को भ्रमपूर्ण बना दिया जाएगा यदि यह शिकायत करने वाले किसी निजी व्यक्ति के लिए तब तक प्रतीक्षा करने के लिए खुला था जब तक कि लोक सेवक अपने आधिकारिक पद पर बने रहना बंद नहीं कर देता, और फिर शिकायत दर्ज करने के लिए। धारा 197 द्वारा प्रदत्त संरक्षण के लिए अंतिम औचित्य यह देखने में सार्वजनिक हित है कि आधिकारिक कार्य अनावश्यक या परेशान करने वाले अभियोजन की ओर न ले जाएं। यह सरकार पर छोड़ दिया जाना चाहिए कि वह उस दृष्टिकोण से किसी भी लोक सेवक पर मुकदमा चलाने की समीचीनता के सवाल का निर्धारण करे।"

40. सी. आर. पी. सी. की धारा 197 में प्रावधान है कि जब कोई व्यक्ति जो लोक सेवक है या था, जो केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है, उस पर अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने के लिए कथित रूप से किए गए किसी अपराध का आरोप लगाया जाता है, तो कोई भी न्यायालय उचित सरकार की पूर्व मंजूरी के अलावा इस तरह के अपराध का संज्ञान नहीं लेगा।

41. सी. आर. पी. सी. की धारा 197 की उप-धारा (1) से पता चलता है कि अभियोजन के लिए मंजूरी की आवश्यकता होती है जहां कोई भी व्यक्ति जो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या लोक सेवक है या था, जो सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है, उस पर अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का तात्पर्य रखते हुए उसके द्वारा किए गए किसी भी अपराध का आरोप लगाया जाता है। संविधान के अनुच्छेद 311 में कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति, जो 949 वर्ष का हो।

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 950

संघ या राज्य की सिविल सेवा का कोई सदस्य या संघ या राज्य के तहत कोई सिविल पद रखता है, उसे उस अधीनस्थ प्राधिकारी द्वारा हटा दिया जाएगा जिसके द्वारा उसे नियुक्त किया गया था। इसलिए, यह इस प्रकार है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 की उप-धारा (1) का संरक्षण केवल ऐसे लोक सेवकों के लिए उपलब्ध है जिनकी नियुक्ति का अधिकार केंद्र सरकार या राज्य सरकार है और प्रत्येक लोक सेवक के लिए नहीं है।

42. सीआरपीसी में 'मंजूरी' शब्द की अवहेलना नहीं की गई है। 'मंजूरी' शब्द का शब्दकोश अर्थ इस प्रकार है:—

"वेबस्टर का तीसरा नया आंतरिक शब्दकोश: प्राधिकरण में एक व्यक्ति द्वारा स्पष्ट अनुमति या मान्यता प्राप्त करें जो किसी अन्य व्यक्ति या निकाय के कार्य को वैधता प्रदान करता है; कुछ ऐसा जो अधिकृत करता है, स्वीकार करता है, या स्वीकार करता है। द न्यू लेक्सिकन वेबस्टर्स डिक्शनरी: प्राधिकरण में किसी व्यक्ति द्वारा दी गई स्पष्ट अनुमति लें।

संक्षिप्त ऑक्सफोर्ड शब्दकोश। प्रथा या परंपरा द्वारा किसी कार्य आदि को दिया गया प्रोत्साहन; अनुमति व्यक्त करना, स्वीकार करना या किसी कानून का अनुसमर्थन करना आदि; (कार्य आदि) को अधिकृत करना, स्वीकार करना या सहमत होना। स्ट्राउड का न्यायिक शब्दकोश: मंजूरी का अर्थ केवल पूर्व अनुमोदन नहीं है; आम तौर पर इसका अर्थ अनुसमर्थन भी है।

शब्द और वाक्यांश: क्रिया 'मंजूरी' का अर्थ 'अधिकृत' से अलग है और इसका अर्थ है सहमति, सहमति, विश्वास या अनुसमर्थन करना। यह शब्द पवित्रता या अधिकार के विचार को व्यक्त करता है।

रामनाथ अय्यर का द लॉ लेक्सिकॉन:पूर्व अनुमोदन या अनुसमर्थन"

43. 78 कॉर्पस ज्यूरिस सेकुंडम में पृष्ठ 579 पर शब्द को एक संज्ञा और एक क्रिया के रूप में अलग-अलग अर्थ दिए गए हैं। एक संज्ञा के रूप में इसका अर्थ है दंड या सजा जो किसी कानून के प्रति आज्ञाकारिता को लागू करने के साधन के रूप में प्रदान की जाती है और व्यापक अर्थ में किसी भी चीज़ का प्राधिकरण और यह अधिकार के विचार को व्यक्त कर सकता है। एक क्रिया के रूप में 'मंजूरी' का अर्थ सहमति, सहमति, विश्वास या अनुसमर्थन है। यू. एस. वी. टिलिंगहास्ट डी. जी., 55 एफ. 2 डी 279 में रिपोर्ट किया गया था, यह माना गया था कि जहां कानूनी अधिकार शामिल हैं, यह संदिग्ध है कि क्या इसे अनुमोदन की एक अचूक अभिव्यक्ति से कम की आवश्यकता के रूप में माना जाना चाहिए। सी. आर. पी. सी. की धारा 197 में, 'मंजूरी' शब्द का उपयोग एक क्रिया के रूप में किया गया है और इसलिए, इसका अर्थ सहमति देना, सहमति या अनुमोदन करना होगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 12 एस सी आर।

44. विधायिका ने मंजूरी को बहुत महत्व दिया है जैसा कि सी. आर. पी. सी. की योजना से स्पष्ट है। सी. आर. पी. सी. की धारा 216 न्यायालय को निर्णय सुनाए जाने से पहले किसी भी समय किसी भी आरोप को बदलने या जोड़ने की शक्ति देती है, लेकिन इसकी उप-धारा (5) में यह प्रावधान है कि यदि परिवर्तित या अतिरिक्त आरोप में कहा गया दोष उस अभियोजन के लिए है जिसकी पूर्व मंजूरी आवश्यक है, तो मामला तब तक आगे नहीं बढ़ेगा जब तक कि ऐसी मंजूरी प्राप्त नहीं हो जाती है, जब तक कि अभियोजन के लिए मंजूरी पहले से ही उन्हीं तथ्यों पर प्राप्त नहीं हो चुकी है जिन पर परिवर्तित या अतिरिक्त आरोप स्थापित किया गया है। ए. आई. आर. 1948 पी. सी. 82 में रिपोर्ट किए गए गोकुलचंद द्वारका दास मोरारका बनाम किंग के प्रमुख मामले में भी प्रिवी काउंसिल द्वारा इस पर जोर दिया गया था, जहां पैरा 9 में इसे पृष्ठ 85 पर निम्नानुसार देखा गया था:—

“... अभियोजन की मंजूरी एक महत्वपूर्ण मामला है; यह अभियोजन की संस्था के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त का गठन करता है और सरकार के पास उनकी मंजूरी देने या रोकने का पूर्ण विवेक है। वे, जैसा कि उच्च न्यायालय ने सोचा है, केवल यह देखने के लिए चिंतित नहीं हैं कि साक्ष्य उस व्यक्ति के खिलाफ एक प्रथम दृष्टया मामले का खुलासा करता है जिस पर मुकदमा चलाया जाना चाहिए।...”

45. अपीलार्थी हैदराबाद में भारतीय स्टेट बैंक, ओवरसीज बैंक में सहायक महाप्रबंधक के रूप में कार्यरत था। भारतीय स्टेट बैंक एक राष्ट्रीयकृत बैंक है। यद्यपि राष्ट्रीयकृत बैंक में काम करने वाला व्यक्ति लोक सेवक है, फिर भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के प्रावधान बिल्कुल भी आकर्षित नहीं होंगे क्योंकि धारा 197 केवल उन मामलों में आकर्षित होती है जहां लोक सेवक ऐसा होता है जिसे सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपनी सेवा से हटाया नहीं जा सकता है। यह विवादित नहीं है कि अपीलार्थी ऐसा कोई पद धारण नहीं कर रहा है जहाँ उसे सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा सेवा से हटाया नहीं जा सके। मामले के इस दृष्टिकोण में, भले ही यह आरोप लगाया गया हो कि अपीलार्थी एक लोक सेवक है, फिर भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के प्रावधान बिल्कुल भी आकर्षित नहीं हैं।

46. यह सवाल कि क्या राष्ट्रीयकृत बैंक का प्रबंधक सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के लाभ का दावा कर सकता है, समाकलन नहीं है। इस न्यायालय में

के. एच. प्रसाद बनाम श्रीमती। जे. वनलता देवी और अन्य ने (1987) 2 में रिपोर्ट किया

एस. सी. सी. 52 ने एक राष्ट्रीयकृत बैंक में काम करने वाले लोक सेवक होने का दावा करने वाले व्यक्ति के संदर्भ में इसी प्रश्न पर विचार करने का अवसर प्राप्त किया। अपीलार्थी के नेतृत्व में दायर आवेदन में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी के अभाव में अभियोजन पक्ष की स्थिरता पर सवाल उठाया गया था, जो 951 था।

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 952 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट द्वारा खारिज कर दिया गया और उच्च न्यायालय में संशोधन का भी यही परिणाम हुआ। इस न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुए कहा कि हालांकि राष्ट्रीयकृत बैंक में काम करने वाला व्यक्ति लोक सेवक है, लेकिन धारा 197 के प्रावधान बिल्कुल भी आकर्षित नहीं हैं। निर्णय के पैरा 6 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है: (एस. सी. सी. पी. 54)

“6. इस प्रावधान से यह बहुत स्पष्ट है कि यह धारा केवल उन मामलों में आकर्षित होती है जहां लोक सेवक ऐसा है जो सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है। यह विवादित नहीं है कि अपीलार्थी ऐसे पद पर नहीं है जहाँ उसे सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा सेवा से हटाया नहीं जा सके। मामले के इस दृष्टिकोण में भले ही यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अपीलार्थी एक लोक सेवक है, फिर भी धारा 197 के प्रावधान बिल्कुल भी आकर्षित नहीं होते हैं।”

(जोर दिया गया) 47। के. एच. में इस न्यायालय का उपरोक्त निर्णय। एस. के. मिगलानी (सुप्रा) के मामले में बाद के निर्णय में प्रसाद (सुप्रा) को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया है। इस मामले में, अपीलार्थी बैंक ऑफ बड़ौदा, फरीदाबाद शाखा में प्रबंधक के रूप में काम कर रहा था। निदेशक, आवास द्वारा अपीलार्थी के खिलाफ लिखित शिकायत दर्ज कराई गई थी। उक्त शिकायत के आधार पर, कोटला मुबारकपुर पुलिस स्टेशन ने आईपीसी की धारा 201, 409, 419, 420, 467, 468, 471 और 120-बी के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की। अभियोजन पक्ष का यह मामला था कि उसमें अपीलार्थी और एक अन्य सह-अभियुक्त ने एक दूसरे के साथ मिलीभगत करके मूल आवंटी के एक नकली अनुरोध पर कार्य किया, जिसमें एक लाख रुपये से एक लाख रुपये की लागत में कमी की गई थी। 10.66 लाख से रु। सक्षम प्राधिकारी की मंजूरी से 7.77 लाख। उक्त एफ. आई. आर. में कई अन्य आरोप लगाए गए थे। जाँच पूरी होने पर आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। अपीलार्थी ने उपरोक्त निर्दिष्ट एफ. आई. आर. में ए. सी. एम. एम., साकेत अदालत, नई दिल्ली के समक्ष एक आवेदन का नेतृत्व किया, जिसमें कहा गया था कि वह एक प्रबंधक के रूप में नेशनलाइज्ड बैंक में कार्यरत एक लोक सेवक होने के नाते, उसके खिलाफ सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के संदर्भ में मंजूरी लेना अनिवार्य था।

48. अदालत के समक्ष यह तर्क दिया गया कि उन्हें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत गैर-अनुपालन के कारण आरोपमुक्त किया जा सकता है। मुख्य महानगर दंडाधिकारी (दक्षिण), साकेत न्यायालय ने अपीलार्थी के नेतृत्व में आवेदन को खारिज कर दिया, जिसमें मंजूरी के अभाव में आरोपमुक्त करने की मांग की गई थी। यह मामला इस अदालत तक पहुंच गया। इस न्यायालय ने पैरा 10 और 12 में क्रमशः निम्नलिखित निर्णय दिया:

“10. अपीलार्थी राष्ट्रीयकृत बैंक में प्रबंधक होने के नाते क्या यह दावा कर सकता है कि उस पर मुकदमा चलाने से पहले धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता है। सी. एम. एम. की राय यह आई कि अपीलार्थी ने यह संतुष्ट नहीं किया कि वह एक लोक सेवक है जिसे सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाया नहीं जा सकता है, इसलिए अपीलार्थी के संबंध में सी. आर. पी. सी. की धारा 197 आकर्षित नहीं की गई। उपरोक्त निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद, सी. एम. एम. के लिए इस प्रश्न में प्रवेश करना आवश्यक नहीं था कि क्या अपीलार्थी के खिलाफ कथित कृत्यों को आधिकारिक कर्तव्य के प्रदर्शन में निर्वहन किया गया था।

× × ×

× × ×

× × ×

12. उच्च न्यायालय ने अपने विवादित निर्णय में उपरोक्त पहलू को स्वीकार नहीं किया है और केवल इस चर्चा को स्वीकार किया है कि क्या अपीलार्थी के कथित कार्य आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में थे। उच्च न्यायालय ने प्रकाश सिंह बादल [प्रकाश सिंह बादल बनाम पंजाब राज्य, (2007) 1 एस. सी. सी. 1 में इस न्यायालय के फैसले पर भी भरोसा किया था: (2007) 1 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 193] हम, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कि अपीलकर्ता एक लोक सेवक नहीं है जिसे सरकार द्वारा या सरकार की मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाया जा सकता है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी लागू नहीं थी। अपीलार्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत संरक्षण का दावा नहीं कर सकता है। हमारा विचार है कि इस बारे में आगे के प्रश्न की जांच की आवश्यकता नहीं थी कि क्या अपीलार्थी अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य कर रहा था या कार्य करने का इरादा रखता था, जब उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) की प्रयोज्यता के लिए शर्तों को पूरा नहीं किया था।

(जोर दिया गया) 49। यह ध्यान देने योग्य है कि बैंकिंग क्षेत्र भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा शासित होने के कारण और संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत राज्य का एक अंग माना जाता है और बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 की धारा 46 ए के आधार पर, इसमें अपीलार्थी को पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत प्रावधानों के उद्देश्य से “लोक सेवक” माना जाता है। हालाँकि, इसे आई. पी. सी. तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है। एक पल के लिए यह मानते हुए कि इसमें अपीलार्थी को आई. पी.

सी. की मंजूरी के लिए भी "लोक सेवक" माना जाना चाहिए, सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत उपलब्ध संरक्षण अपीलार्थी के लिए उपलब्ध नहीं है क्योंकि सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत बनाई गई शर्तें पूरी नहीं होती हैं।

953

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 954 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2023] 12 एस. सी. आर.

50. दुर्भाग्य से, मामले में, उच्च न्यायालय भी उपरोक्त पहलू से चूक गया या उसकी अनदेखी की और अपने निर्णय को स्वीकार किया कि क्या अपीलार्थी के कथित कार्य आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन कर रहे थे। प्रश्न संख्या 1 का उत्तर तदनुसार दिया जाता है।

प्रश्न सं. 2.

51. अपीलार्थी की ओर से पेश विद्वान वकील ने जोरदार तर्क दिया कि चूंकि पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी नहीं दी गई है, इसलिए अपीलार्थी पर अकेले आई. पी. सी. के तहत मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है और उसे अपराधी से मुक्त कर दिया जाना चाहिए। पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 इस प्रकार है:

“19. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी आवश्यक है।—

(1) लोकपाल और लोकायुक्ता अधिनियम, 2013 (2014 का 1) में अन्यथा उपबंधित पूर्व मंजूरी के अलावा, कोई भी अदालत किसी लोक सेवक द्वारा की गई धारा 7, 11, 13 और 15 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान नहीं लेगी।

(क) किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में जो नियोजित है, या जैसा भी मामला हो, संघ के संबंध में नियोजित कथित कार्य के समय था और केंद्र सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है।

(ख) ऐसे व्यक्ति के मामले में जो नियोजित है, या जैसा भी मामला हो, किसी राज्य के संबंध में नियोजित कथित कार्य के समय था और राज्य सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा उस सरकार के अपने कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है; (ग) किसी अन्य व्यक्ति के मामले में, उसे अपने कार्यालय से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी का:

बशर्ते कि किसी पुलिस अधिकारी या किसी जांच एजेंसी या अन्य कानून प्रवर्तन प्राधिकरण के अधिकारी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, इस उप-धारा में निर्दिष्ट किसी भी मामले में अदालत द्वारा संज्ञान लेने के लिए ऐसी सरकार या प्राधिकरण की पूर्व मंजूरी के लिए, जैसा भी मामला हो, उपयुक्त सरकार या सक्षम प्राधिकारी से कोई अनुरोध नहीं किया जा सकता है, जब तक कि

(i) ऐसे व्यक्ति ने कथित अपराधों के बारे में एक सक्षम अदालत में शिकायत की है जिसके लिए लोक सेवक पर मुकदमा चलाने की मांग की गई है; और

((ii) न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 203 के तहत शिकायत को खारिज नहीं किया है और शिकायतकर्ता को आगे की कार्यवाही के लिए लोक सेवक के खिलाफ अभियोजन के लिए मंजूरी प्राप्त करने का निर्देश दिया है:

बशर्ते कि पुलिस अधिकारी या किसी जांच एजेंसी या अन्य कानून प्रवर्तन प्राधिकरण के अधिकारी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति के अनुरोध के मामले में, उपयुक्त सरकार या सक्षम प्राधिकारी संबंधित लोक सेवक को सुनने का अवसर प्रदान किए बिना किसी लोक सेवक पर मुकदमा चलाने की मंजूरी नहीं देगा:

बशर्ते कि उपयुक्त सरकार या कोई सक्षम प्राधिकारी, इस उप-धारा के तहत किसी लोक सेवक के अभियोजन के लिए मंजूरी की आवश्यकता वाले प्रस्ताव की प्राप्ति के बाद, ऐसी प्राप्ति की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर ऐसे प्रस्ताव पर निर्णय देने का प्रयास करेगा:

बशर्ते कि ऐसे मामले में जहां अभियोजन के लिए मंजूरी देने के उद्देश्य से कानूनी परामर्श की आवश्यकता होती है, ऐसी अवधि, लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, एक महीने की और अवधि के लिए बढ़ाई जा सकती है:

बशर्ते कि केंद्र सरकार, किसी लोक सेवक के अभियोजन के लिए मंजूरी के उद्देश्य से, ऐसे दिशानिर्देश निर्धारित कर सकती है जो वह आवश्यक समझती है।

स्पष्टीकरण.--उप-धारा (1) के प्रयोजनों के लिए, "लोक सेवक" पद में ऐसा व्यक्ति शामिल है -

((क) जिसने उस कार्य को रोकना बंद कर दिया है जिसके दौरान कार्य करने का आरोप लगाया गया है; या

(ख) जिसने उस कार्य को रोकना बंद कर दिया है जिसके दौरान कार्य को कथित रूप से किया गया है और उस कार्य के अलावा अन्य कार्य को धारण कर रहा है जिसके दौरान कार्य को कथित रूप से किया गया है।

955

ए. श्रीनिवास रेड्डी बनाम राकेश शर्मा और ए. एन. आर. [जे. बी. पारदीवाला, जे.] 956

(2) जहां किसी भी कारण से इस बारे में कोई संदेह उत्पन्न होता है कि क्या उप-धारा (1) के तहत आवश्यक पूर्व मंजूरी केंद्र सरकार या राज्य सरकार या किसी अन्य प्राधिकरण द्वारा दी जानी चाहिए, तो ऐसी मंजूरी उस सरकार या प्राधिकरण द्वारा दी जाएगी जो लोक सेवक को उस समय अपने पद से हटाने के लिए सक्षम होता जब अपराध करने का आरोप लगाया गया था।

(3) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में कुछ भी निहित होने के बावजूद, -

(क) उप-धारा (1) के तहत अपेक्षित मंजूरी की अनुपस्थिति या उसमें किसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर किसी विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित किसी भी निर्णय, सजा या आदेश को अदालत द्वारा अपील, स्वीकार या संशोधन में उलट या बदला नहीं जाएगा, जब तक कि उस अदालत की राय में न्याय की विफलता वास्तव में इसके कारण नहीं हुई है; (ख) कोई भी अदालत प्राधिकरण द्वारा दी गई मंजूरी में किसी भी त्रुटि, चूक या अनियमितता के आधार पर इस अधिनियम के तहत कार्यवाही पर रोक नहीं लगाएगी, जब तक कि यह संतुष्ट नहीं हो जाता है कि ऐसी त्रुटि, चूक या अनियमितता के परिणामस्वरूप न्याय की विफलता हुई है।

(ग) कोई भी अदालत किसी अन्य आधार पर इस अधिनियम के तहत कार्यवाही पर रोक नहीं लगाएगी और कोई भी अदालत किसी भी जांच, मुकदमे, अपील या अन्य कार्यवाही में पारित किसी भी अंतर्वर्ती आदेश के संबंध में संशोधन की शक्तियों का प्रयोग नहीं करेगी।

(4) उप-धारा (3) के तहत यह निर्धारित करने में कि क्या इस तरह के अनुमोदन की अनुपस्थिति या कोई त्रुटि, चूक या अनियमितता न्याय की विफलता का कारण बनी है या इसके परिणामस्वरूप हुई है, न्यायालय को इस तथ्य पर ध्यान देना होगा कि क्या आपत्ति कार्यवाही में किसी भी प्रारंभिक चरण में उठाई जा सकती थी और होनी चाहिए थी।

स्पष्टीकरण.— इस धारा के प्रयोजनों के लिए -

(क) त्रुटि में मंजूरी देने के लिए प्राधिकरण की क्षमता शामिल है; (ख) अभियोजन के लिए आवश्यक मंजूरी में किसी भी आवश्यकता का संदर्भ शामिल है कि अभियोजन किसी विशिष्ट प्राधिकारी के कहने पर या किसी विशिष्ट व्यक्ति की मंजूरी या इसी तरह की किसी आवश्यकता के साथ होगा।"

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 12 एस सी आर।

53. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी पर विचार किया गया

एक लोक सेवक जिस पर "अपने कार्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का तात्पर्य रखते हुए उसके द्वारा किए गए किसी भी अपराध का आरोप लगाया जाता है।

जबकि, पी. सी. अधिनियम, 1988 में जिन कार्यों पर विचार किया गया है, वे ऐसे कार्य हैं जिन्हें उनके आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में प्रत्यक्ष रूप से या कथित रूप से किए गए कार्यों के रूप में नहीं माना जा सकता है।

59. उपरोक्त से, यह कहा जा सकता है कि कोई पूर्ण नियम नहीं हो सकता है कि विशेष न्यायाधीश की अदालत के समक्ष अभियोजन में, पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत पिछली मंजूरी हमेशा एकमात्र पूर्व-आवश्यकता होगी। यदि लोक सेवक के खिलाफ मुकदमा चलाया जाना अपेक्षित है, जिसमें पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत दंडनीय के अलावा अन्य मामले शामिल हैं, अर्थात् सामान्य कानून (यानी आई. पी. सी.) के तहत, अदालत संज्ञान के समय और यदि आवश्यक हो, तो बाद के चरणों में (जैसे-जैसे मामला आगे बढ़े) जांच करने के लिए बाध्य है कि क्या सी. आर. पी. सी. की धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता है। एक ओर पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 और दूसरी ओर सी. आर. पी. सी. की धारा 197 की वैधानिक आवश्यकताओं के बीच एक भौतिक अंतर है। विशेष रूप से पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अपराधों के लिए अभियोजन में, लोक सेवक के लिए मंजूरी अनिवार्य है। लोक सेवक के खिलाफ सामान्य दंडात्मक कानून के तहत मामलों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता (या अन्यथा) तथ्यात्मक पहलुओं पर निर्भर करती है। बाद के मामले में परीक्षा कमीशन या चुक के कार्य और लोक सेवक के आधिकारिक कर्तव्य के बीच "सांठगांठ" की है।

कानून के तहत दंडनीय अपराध करना कभी भी लोक सेवक के आधिकारिक कर्तव्य का हिस्सा नहीं हो सकता है। इस तरह के तर्क पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता को अपनाना और अस्वीकार करना बहुत सरल दृष्टिकोण है। "सुरक्षित और निश्चित परीक्षा" यह पता लगाने के लिए है कि क्या शिकायत किए गए कार्य को करने में चूक या उपेक्षा ने लोक सेवक को अपने आधिकारिक कर्तव्य में लापरवाही के आरोप के लिए जवाबदेह बना दिया होगा। हो सकता है कि उसने "अपने कर्तव्य से अधिक" कार्य किया हो, लेकिन यदि विवादित कार्य और आधिकारिक कर्तव्य के प्रदर्शन के बीच एक "उचित संबंध" है, तो सीआरपीसी की धारा 197 की सुरक्षात्मक छत्रछाया से इनकार नहीं किया जा सकता है, जब तक कि आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन का उपयोग अवैध कृत्यों के लिए एक लबादा के रूप में नहीं किया जाता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 12 एस सी आर।

60. इससे पहले कि हम इस मामले को बंद करें, हम कुछ ऐसा अवलोकन करना चाहेंगे जिस पर इस न्यायालय को जल्द या बाद में विचार करना पड़ सकता है। पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के अधिनियमन के पीछे का उद्देश्य लोक सेवकों को तुच्छ अभियोजनों से बचाना है। एक ऐसा मामला लीजिए, जिसमें मंजूरी देने वाला प्राधिकारी पी. सी. अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी देने से इनकार करते समय कहता है कि मंजूरी देने से इनकार किया जा रहा है क्योंकि आरोपी के खिलाफ अभियोजन को तुच्छ या परेशान करने वाला कहा जा सकता है। फिर, ऐसी परिस्थितियों में जहां तक आई. पी. सी. के प्रावधानों का संबंध है, मुकदमे पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा? क्या यह कहा जा सकता है कि पी. सी. अधिनियम, 1988 के तहत अपराधों के लिए अभियोजन तुच्छ है, लेकिन आई. पी. सी. के तहत अपराधों के लिए ऐसा नहीं होगा? हम वर्तमान मामले में इस प्रश्न में नहीं जा रहे हैं क्योंकि मंजूरी को शुरू में इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया गया था कि अपीलार्थी के खिलाफ अभियोजन तुच्छ या परेशान करने वाला है, लेकिन इसे अनिवार्य रूप से इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया था कि जो आरोप लगाया गया है वह केवल आवश्यक कर्तव्यों के निर्वहन में प्रक्रियात्मक अनियमितताएं हैं। इस तरह की प्रक्रियात्मक अनियमितताएं आई. पी. सी. के तहत कोई अपराध हैं या नहीं, इस पर निचली अदालत द्वारा गौर किया जाएगा। हमने जिस पर प्रकाश डाला है, उसकी जांच इस न्यायालय द्वारा किसी अन्य मुकदमे में उचित समय पर की जा सकती है।

61. मामले के समग्र दृष्टिकोण से, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अपील खारिज की जानी चाहिए और इसके द्वारा खारिज कर दिया जाता है।

द्वारा तैयार किए गए हेडनोटः

याचिका खारिज की जाती है।

दिव्या पांडे